तुखारी छंत महला १ बारह माहा ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

बारां महीने द्वारा परमेसर अगे गुण कथन सहित जग्यासू की बेनती करते हैं |

तू सुणि किरत करमा पुरबि कमाइआ ॥

हे परमेसर! तूं मेरी बेनती सुण: जो जो जीवों ने पूरब (क्रीत) करन वाले हो के करमों को कमाया है ||

सिरि सिरि सुख सहमा देहि सु तू भला ॥

तत क्रितों अनुसार जो तूं सुख अर (सहमा) दुख सिर सिर अरथात भिंन भिंन कर देता हैं, सो हम भला कर के मांनते हैं; वा सो तूं भला हैं, भाव से निरदोस हैं ||

हरि रचना तेरी किआ गति मेरी हरि बिनु घड़ी न जीवा ॥

हे हरी! तेरी रचनां में मेरी बुधी लाग रही है यां ते मेरी काया गति होवेगी, तेरी प्रापती बिनां में इक घड़ी मात्र भी जीव नहीं सकती हूं||

प्रिअ बाझु दुहेली कोइ न बेली गुरमुखि अम्रितु पीवां ॥

हे पती! तेरे बिनां मैं बहुत दुखी हो रही हूं और मेरा मित्र कोई नहीं है, तां ते इह किरपा करो जो गुरों दुआरे तेरे नाम अम्रित को पान करूं ||

रचना राचि रहे निरंकारी प्रभ मनि करम सुकरमा ॥

हे निरंकार प्रभू! हम जीव (निरंकारी) निरंकार की अरथात तेरी रचनां में रच रहे हैं, और आप का जो मंनन करनां है, सो यह करमों में (सु) स्रेसट करम है | आप रचनां को रच रहे हो अर हमारे समान करमां को स्रेशट करम कर के मानते हो ||

नानक पंथु निहाले सा धन तू सुणि आतम रामा ॥१॥

स्री गुरु जी कहते हैं: हे (आतम) सभ का आपणा आप रूप प्रभू! मैं (सा धन) इसत्री आप का (पंथु) रसता (निहाले) देखती हूं | हे (राम) ब्यापक रूप! तूं मेरी बेनती सुण, भाव मेरे को प्रापती होईए ||1||

बाबीहा प्रिउ बोले कोकिल बाणीआ ॥

हे पती! आप के जस को जिनां का चित रूपी बबीहा बोलता, भाव चिंतन करता है । और कौकल बाणीआं, भाव जिहवा जिन की (आ) वशेश कर के राम नाम बाणी को बोलती हैं॥

सा धन सभि रस चोलै अंकि समाणीआ ॥

(सा) वहु जीव रूप (धन) इसत्री (अंकि) सरूप में समाई है, तिस ने सभ रस (चोलै) धार लीए हैं॥

हरि अंकि समाणी जा प्रभ भाणी सा सोहागणि नारे ॥

जां हे हरी प्रभु! तेरे को भाई तौ (अंकि) स्वरूप में समावती भई अर (सा) वोही इसत्री सुहागणी है॥

नव घर थापि महल घरु ऊचउ निज घरि वासु मुरारे ॥

हे (महल) पती परमेसुर! (नव घर) नवों गोलकों वाले सरीर घर को (थापि) रच कर के अपनां घर दसवां दवार तैने ऊचा रचा है । तिस दसवें दुआर रूप घर मेंम हे मुरारी! तूं निवास कर रहा हैं॥

सभ तेरी तू मेरा प्रीतमु निसि बासुर रंगि रावै ॥

सब स्रिसटी रची हुई तेरी आग्या में है अर तूं मेरा प्रीतम हैं, रात्र दिन (रंगि) प्रेम कर के तेरे को (रावै) जपते हैं॥

नानक प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा कोकिल सबदि सुहावै ॥२॥

स्री गुरु जी कहते हैं: हे प्रभु! मेरा वा संतों का चित रूपी पपीहा पती पती कर के चिंतन करता है अर जिहवा रूपी कोकिल राम राम सबद को (चवै) उचारती हूई सोभा पावती है॥2॥

तू सुणि हरि रस भिंने प्रीतम आपणे ॥

हे आपणे भाव मेरे प्रीतम हरी! तेरे नाम रस में हमारे अंतहिकरण आदि सनिगध हूए हैं, तां ते तूं मेरी बेनती सुणः॥

मनि तनि रवत रवंने घड़ी न बीसरै ॥

मन कर के तेरे को (रवत) जपते हैं और तन कर के भी (रवंने) भगती करते हैं, तूं घड़ी मात्र भी हमारे मन ते बिसरती नहीं हैं॥

किउ घड़ी बिसारी हउ बलिहारी हउ जीवा गुण गाए ॥

किउं घड़ी मात्र विसारों, मैं तेरे पुर बलिहारने जाती हूं और मैं तेरे गुणों को गाइ कर जीवती हूं॥

निवासे भए पवित्र सरीरा ॥

संसार में मेरा कोई नहीं यां ते मैं भी किसी का नहीं । हे हरी! तुमारे बिनां मेरे से रहा नहीं जाता॥

ना कोई मेरा हउ किसु केरा हरि बिनु रहणु न जाए ॥

हे हरी! मन कर के तेरी ओट पकड़ी है और तन कर के तेरे चरणों में निवास कीआ है और सरीर कर के तेरी सेवा कर के पवित्र हूए हैं॥

ओट गही हरि चरण नानक द्रिसटि दीरघ सुखु पावै गुर सबदी मनु धीरा ॥३॥

स्री गुरु जी कहते हैं: गुर उपदेस कर जिनों का मन धीरज को प्रापती भइआ है वहु वड्डी द्रेसटी वाले अरथात वैराग द्रिसटी कर सुख को पावते हैं॥3॥

बरसै अम्रित धार बूंद सुहावणी ॥

गुरु रूपी मेघ उपदेस रूप अम्रित की धारा बरसते हैं । अर जिस जग्यासू रूप चात्रिक को नाम रूपी स्वांती बूंद प्रापत होई है तिस की देह वा बुधी सुहावणी, भाव सफली होई है॥

साजन मिले सहजि सुभाइ हरि सिउ प्रीति बणी ॥

जिन को सांती सुभाउ वाले गुरु सजन मिले हैं, हे हरी! तेरे साथ तिनों की प्रीत बण गई है॥

हरि मंदरि आवै जा प्रभ भावै धन ऊभी गुण सारी ॥

जौ हे हरी प्रभु! तेरे को भाइ जाईए तब तूं अंदर आवता हैं क्या प्रापति होता हैं । इस बात का जान कर मैं जो (धन) इसत्री हां (ऊभी) खड़ी हो के अरथात सावधान हो के तेरे गुणों को समालती हूं॥

घरि घरि कंतु रवै सोहागणि हउ किउ कंति विसारी ॥

हे कंत हरी! तूं (घरि घरि) सरीर सरीर प्रति हैं और सुहागणीऔं को रावता हैं । हे पती! तैने मैं किउं बिसारी हां, भाव मेरे पर भी किरपा करु जो तेरे साथ अभेद हो जावां; वा गुरमुख सुहाग्णीआं आपणे आपणे सरीर रूपी घर में तेरे को रावतीआं हैं औ हे कंत! मैं तेरे को किउं (विसारी) भुला देवों, भाव यह कि तेरे को भुलावनां नहीं चाहती हूं॥

उनवि घन छाए बरसु सुभाए मनि तनि प्रेमु सुखावै ॥

गुर रूप बादल छाई रहे हैं और (उनवि) झुक कर अरथात द्याल हो के (सुभाए) निरजतन ही उपदेस रूपी बरखा को करते हैं, तिनों की किरपा कर के तन मन विखे तेरा ही प्रेम सुखावता है अरथात पिआर लागता है॥

नानक वरसै अम्रित बाणी करि किरपा घरि आवै ॥४॥

स्री गुरू जी कहते हैं: जब गुरू रूप मेघ आम्रित बाणी को बरखते हैं, तब हे हरी! किरपा कर के तूं आवता हैं॥4॥

इस प्रकार परार्मभ कर के अब बारां माहां दुआरा अधकारीऔं पति परमेसर प्रापती का प्रकार दिखावते हैं: जैसे वियोग वती बसंत रुत में आपने की अकांखया करती है, तैसे ही गुरु जी अपनी सरधा प्रीती परगट करते हैं । बाह्य अरथ तो प्रसिध ही है अंतरीव कथन करते हैं:

चेतु बसंतु भला भवर सुहावड़े ॥

प्रेम रूप चेत का महीनां (भला) उतम चड़ा है और मनुख देह रूपी बसंत रुत तिस में जग्यासू जन भवर सोभनीक अरथात अनंद हो रहे हैं, भाव सुभ गुणों रूपी सुगंधी लेते हैं॥

बन फूले मंझ बारि मै पिरु घरि बाहुड़ै ॥

बन प्रफुलत हो रहे हैं अरु (मंझ) बीच (बारि) जल है। सो ऐसे सम्य में हे (पिरु) पती! मेरे घरि बाहुड़े, भाव रिदे में प्रापति होवहु। भाव यह कि चेत्र के महीने बरखा के सबब बनासपती प्रफुलत होती है और ब्रिहनी इसत्री तिस सम्य अपने पति की उतकंठा अरथात उडीक करती है कि मेरे को पती प्रापति होवे। किउंकि जिस इसत्री का पती घर नहीं होता वहु दुखी होती है। तैसे ही संत जन बन सुभ गुण रूप फूलों कर प्रफूलत हो रहे हैं और तिन के बीच कथा कीरतन रूपी जल है। तिस समाज के होते भी हे पती! मेरे को तेरी प्रापती नहीं है तां ते मेरी इह प्रारथना है कि मेरे को प्रापति होवहु॥ अब पती की अप्रापती का दुख कहते हैं:

पिरु घरि नही आवै धन किउ सुखु पावै बिरहि बिरोध तनु छीजै ॥

हे पती! जब तक तूं मेरे रिदे घर में नहीं आवता तब तक मैं (धन) इसत्री कैसे सुख को प्रापत होवों? किउंकि बिरहे बरोधी करके; वा बिरहे पावणेहारे कामादिक बरोधीओं कर मेरा सरीर छीन जाता है॥

कोकिल अ्मबि सुहावी बोलै किउ दुखु अंकि सहीजै ॥

अम्ब रूप संत तिन की बाणी रूप कोकिल, हे हरी! तेरे जस को बोलती सोभ रही है। हे पती! तेरा बियोग रूपी दुख मेरे (अंकि) रिदे में कैसे सहारा जावे, भाव सहारा नहीं जाता॥

भवरु भवंता फूली डाली किउ जीवा मरु माए ॥

फूली होई डाली करणा मुदिता आदिकों पर जग्यासू रूप भवरा गुंजार कर रहा है अरथात रस को पी रहा है; वा डालीआं बेद साखा संतहु के जो गुण बेद ने कथन कीए हैं, सो फुल हैं, तिनों पर (भवंता) फिरता है। सो ऐसे समें हे (माए) माया पती! मेरा जीवनां कैसे होवै, मैं मर रही हूं॥ जे कहें तेरे को कैसे सुख होवै? तिस पर कहते हैं:

नानक चेति सहजि सुखु पावै जे हरि वरु घरि धन पाए ॥५॥

स्री गुरो जी कहते हैं: मानुख देह रूप बसंत में प्रेम रूपी चेत का महीना, तिस विखे हे हरी (वरु) पती! जेकर जग्यासू रूप इसत्री तेरे को पाइ कर (सहजि) अचुत सुख को पाइ लेवै॥5॥

वैसाखु भला साखा वेस करे ॥

वा वाह्य अरथ प्रसिध है: वैसाख दुआरा कहते हैं: वहु पुरस भला (साखा) पति वाला है, जो बेद कीआं साखा अरथात सासत्र सिम्रतीआं हैं तिन के अनुसार जो वेस भेख धारत करता है, भाव से सासत्र अनुसार करम करता है॥

धन देखै हरि दुआरि आवहु दइआ करे ॥

हे हरी! मैं (धन) इसत्री तेरे दुआरे में अरथात सतसंग में इसथित होई देखती हूं, किरपा कर मेरे घर रिदे में आइ कर प्रापत होईए॥

घरि आउ पिआरे दुतर तारे तुधु बिनु अढु न मोलो ॥

हे पिआरे! मेरे रिदे घर में आवहु। जे कहैं आउणे से किआ होगा? तिस पर कहते हैं: जिन के घर में तूं आया हैं से संसार रूप (दुतर) कठन समुंदर से तैने तारे हैं। तेरे बिनां मेरा (अढु) कौडी भी मोल नहीं है॥

कीमति कउण करे तुधु भावां देखि दिखावै ढोलो ॥

हे वाहिगुरू! जे मैं तेरे को भाइ जावों अरथात प्रापत होइ जावां तो मेरी कीमत कौन कर सकेगा। जे कहे मेरा प्रापत होणां किआ है मैं तो अंतर ही हां? तिस पर कहते हैं: हे (ढोलो) पयारे! यदपि तूं अंतर ही हैं तदप तेरा स्वरूप ते देखीता है। जेकर तूं गिआन द्रिसटी कर दिखाइ देवें तां ते इही किरपा करो॥

दूरि न जाना अंतरि माना हरि का महलु पछाना ॥

तेरे को मैं दूर ना जानो सरीर के अंतर ही मान लेवों। हे हरी! तेरा (महलु) सरूप जो अंतर बाहर अकास सम पूरन है, सो मैं यथारथ पछान लेवों॥

नानक वैसाखीं प्रभु पावै सुरति सबदि मनु माना ॥६॥

स्री गुरु जी कहते हैं: जिनों ने गुरों का सबद ग्यात पूरबक मन में मंनन कीआ है, (वै) वहु हे साखी प्रभू! तेरे को पावते हैं॥6॥

माहु जेठु भला प्रीतमु किउ बिसरै ॥

माहु (जेठु) बडा जो तर तीबर बैराग हुआ है तिस में भला प्रीतम वाहिगुरू तूं मेरे को किउं बिसरें, भाव यहि कि मंद वैराग में विसरने का असचरज नहीं है। दोनो लोक का सहाइक होणे ते तूं भला प्रीतम हैं, बिनां मिले जो दुख है सो कहते हैं॥

थल तापहि सर भार सा धन बिनउ करै ॥

तेरे वियोग रूप अगनी कर (थल) अंतहिकरण (भार) भठ की (सर) सादरस तप रहे हैं, इसी ते (सा) मैं (धन) इसत्री आप अगे बेनती करती हूं: ॥

धन बिनउ करेदी गुण सारेदी गुण सारी प्रभ भावा ॥

मैं इसत्री बाणी कर के (बिनउ) बेनती करती हूं और तेरे किरपालतादि गुण मन कर के संभालती हूं। गुण संभालणे ते यह लाभ है कि जे गुण संभालोगी तौ, हे प्रभु! तेरे को भाइ जावोंगी अरथात पाइ लेवोंगी। जे कहैं गुण स्मभालणे रूप भगती तेरे मैं हो गई, तो फिर किआ कसर रही तूं मेरे को आई मिल॥ तिस पर कहते हैं:

साचै महलि रहै बैरागी आवण देहि त आवा ॥

हे (बैरागी) निरलेप स्वरूप! तूं आपणे साचे (महिल) स्वरूप में (रहै) इसथत हैं; वा तूं सतसंग रूप सचे महिल में इसथित हैं। जेकर बिघण गन तेरी तरफ आवन देवै तौ आवौ, तां ते मेरे बस नहीं; वा आवणे की जुगती तत्व मिथ्या का विचार रूप मेरे को देवै तौ तेरी ओर आवों, तां ते मेरे कुछ बस नहीं है॥ सो आगे कहते हैं:

निमाणी निताणी हरि बिनु किउ पावै सुख महली ॥

हे भगवन! मन कर मैं निमाणी हूं अर तन कर के भी निताणी हूं, गुण सारन आदिक साध के आसकत हूं। हे हरी! तेरी किरपा से बिनां (महली) स्वरूप सुख को कैसे पावों?॥

नानक जेठि जाणै तिसु जैसी करमि मिलै गुण गहिली ॥७॥

स्री गुरू जी कहते हैं: जो इसत्री (जेठी) तीवर बैराग को धार कर तेरे को जाणे है, सो तेरे जैसी ही है। परंतू जो तेरी (करमि) किरपा बखसीस कर सुभ गुणों में मिली है, सो तुम ने (गहिली) पकड़ लई अरथात अभेद कर लई है॥7॥

आसाड़ु भला सूरजु गगनि तपै ॥

जिस प्रकार हाड़ के महीने अकास में सूरज (भला) अती तपतवान है, तैसे ही आसा रूप असाड़ में अग्यान रूप सूरज राग द्वैख किरणों कर मेरे रिदे (गगनि) अकास में भली प्रकार तप रहा है॥

धरती दूख सहै सोखै अगनि भखै ॥

मेरी बुधी रूप धरती दूख सहारती है, किउंकि अग्यान सूरज सुभ गुण रूप जल को तिस में से सोखन करता है औ अगन वत तप रहा है, वा तिस कर के अगन वत बुधी भख रही है॥

अगनि रसु सोखै मरीऐ धोखै भी सो किरतु न हारे ॥

अगन वत तप कर गुणों रूप (रसु) जल को सुकावता है इसी ते (धोखै) संसों में मरीता है, (भी) बहुड़ो अग्यान सूरज तपाउण रूप अपने करम को हारता नहीं अरथात तिआग नहीं करता, भाव यह कि अग्यान जीव को बार्मबार तपावता है॥

रथु फिरै छाइआ धन ताकै टीडु लवै मंझि बारे ॥

बहुड़ो जब असाड़ महीने में सूरज का रथ फिरता है अरथात उत्राइण दखयाइण को होता है तब इसत्रीआं ब्रिछादिकों की चाया को तकती हैं और (बारे) उजाड़ों के बीच (टिडु) बिंडे (लवै) बोलते हैं। पुनाः अंत्रीव आथः जब अग्यान का रथु फिरा तब जग्यासू रूप इसत्री इकागरता वा सांती रूप चाया को तक रही हैं और काम, क्रोधादि बिकार रूप बिंडे अंतहिकरण वा सरीर रूपी (बारे) उजाड़ में बोलते हैं, भाव अपने अपने विसिओं की खैंच करते हैं॥

अवगण बाधि चली दुखु आगै सुखु तिसु साचु समाले ॥

जो इसत्री औगणों की गठड़ी बांध कर, भाव औगणों को धार कर संसार में (चली) बिचरती है; वा प्रलोक में चली, तिस को (आगै) प्रलोक में दुख होता है। और जिस ने तेरे सचे नाम को चिंतन कीआ है सुख तिस ही को होता है॥

नानक जिस नो इहु मनु दीआ मरणु जीवणु प्रभ नाले ॥८॥

स्री गुरु जी कहते हैं: हे प्रभू! जिस आप को मैने एहु मनु दे दीआ है मरणां जीवणां भी मेरा तिस आप के साथ है। यथा परमाण –

मः5॥ मरणं बिसरुणं गोबिंदह जीवणं हरिनाम धिआवणह॥

वा दूसरा अरथ पांचउ तुकों का आसाड़ का (आ) वसेस कर के (साड़) तप तपणा (भला) अधिक है, किउंकि देहि अधिआस रूप सूरज रिदे अकास में तप रहा है।

सासत्र में लिखा है अध्यास ते बिनां अग्यान दुखदाई नहीं अध्यास सहित अग्यान जीव को दुखदाई है। जाग्रत सुपन में अध्यास है तब दुख प्रतीत होते हैं। सखोपति विखे ससत्रों के धाव आदिकों का कोऊ भी दुख प्रतीत नहीं होता। आतमा अनातमा के समान अंसों का प्रतीत होणा निमित कारण है और जो वसेस अंसों का प्रीत न होणा यही अध्यास का उपादान कारण है। अहं सुखी, अहं दुखी अहं रूप बधर अहं काणो इत्यादिक प्रतीत, भाव यह कि देह साथ अपणी एकता जानणी यही अध्यास का स्वरूप है। जनम जनमंत्रों की प्रापती एही अदध्यास क फल है। (धरती दूख सहै) तिस अध्यास कर के बुधी रूप धरती दुखों को सहारती है। अध्यास सूरज अगन के समान (भखे) परज्वलत हूआ सोखता है। जे कहैं किआ सोखन करता है? तिस पर कहते हैं: अगन रस अगन सम तप के (रस) प्रेम को सोखता है। प्रेम उपलखत सभ दैवी गुण जाण लैणे, किउंकि सुभ गुणों में प्रेम सुख मे प्राण॥ यथा – 'बिरहा बिरहा आखीए बिरहा तू सलतानु॥ फरीदअ जितु, तनि बिरहु न उपजै सो तनु जाण मसानु॥' और यथा – 'जिन प्रेम कीओ तिनही प्रभु पाइओ॥' ऐसे प्रेम की मुखता में अनेक प्रमाण हैं। धोखे संसिओं कर देह अध्यासी मरता है अर सो अध्यास् (भी) बहुड़ो तपाउण रूप किरत को नहीं हारता है। (रथु फिरै) देह अध्यास रूपी सूरज का रथ फिरा अरथात जब सतसंग अर सासत्र के विचार दुआरा देह अध्यास कम हुआ, तब जीव रूप धन इसत्री सांती रूप छाया को तकती है, परंतु सांती कैसे होवै? देह रूप उजाड़ में औगणों रूपी बिंडे बोल रहे हैं। अगली दो तुकों का पूरब अरथ कहा है, सो ईहां जाण लैणा॥

वा तीसरा अरथ: (आ) सरब ओर से भला साड़ अरथात अधिक साड़ है, किउंकि रिदे अकास में वैराग रूप सूरज तपता है। जग्यासी की (धरती) बुधी वैराग जन दुखों को सहारती है। वैराग सूरज अगनी के सम भख कर सोखता है। जे कहें क्या सोखता? तिस पर कहते हैं अगनि रसि अगनी के समान तप कर विशे वासनां रूप जल के तांई बुधी रूप धरती बीच से खैचता है। भाव यह तीबर वैराग वाले की बुधी में से विसे वासनां उठ जाती है अर संसिओं कर मरता है। संसा यहि के किआ जानो परमेस्वर प्रापत होवैग वा ना होवेगा? बहुड़ो वैराग रूप सूरज तपाउण रूप आपणे करम को नहीं हारता। (रथ फिरै) जब वैराग सूरज का रथ फिरता है तब जग्यासू इसत्री सांती को तकती है, भाव यहि कि प्रिथमे केवल वैराग था। पुनः बबेक सहित हूआ यही रथ का फिरना है। (टीडु लवे) देह वा

अंतहिकरन रूपी (बार) उजाड़ विखे सति, संतोखादि सुभ गुणों रूप बिंडे बोलते हैं अरथात आइ कर बिराजते हैं। जो इसत्री औगुण अर दुखों को (बाध) नास कर के तेरे भजन में (चली) प्रविरती है, हे सचे वाहिगुरू! तेरे समालणे अरथात चिंतन करने कर तिस को सुख प्रापति हुआ है।

पुनाः अंत की तुकों का पूरबोकत अरथ जानना॥7॥

सावणि सरस मना घण वरसहि रुति आए ॥

हे मनां पिआरे! जब हम मानुख देह सावण में (सरस) प्रम के सहित हूए तब एसी रुत के आए गुरू रूप मेघ उपदेस वरखा करते हैं॥

मै मनि तनि सहु भावै पिर परदेसि सिधाए ॥

हे (सहु) पती! मेरे तन अर मन को तुम पिआरे लगते हो। परंतू हे पती! आप प्रदेस सिधाए हुए हो, भाव यह कि मेरे को प्रोख हो प्रापत नहीं हो॥

पिरु घरि नही आवै मरीऐ हावै दामनि चमकि डराए ॥

हे पती! तेरे घर ना आउणे कर के (हावै) हाहुके कर मरीता है अर माया रूप बिजुली संपदा आवदा रूप अनेक प्रकार के चमतकारों कर डरावती है॥

सेज इकेली खरी दुहेली मरणु भइआ दुखु माए ॥

हे माया पती! तेरे बिनां मेरी अंतहकरण सेज अकेली है पुनः (खरी) अति (दुहेली) हो रही हूं, इसी दुख से मेरा मरनणा हो रहा है॥

हरि बिनु नीद भूख कहु कैसी कापड़ु तनि न सुखावए ॥

हे हरी! आप की प्रापती बिनां कहु तो निंद्रा और भूख कैसी होवै, हमारे तन पर कपड़ा भी अछा नहीं लागता है॥

नानक सा सोहागणि कंती पिर कै अंकि समावए ॥९॥

स्री गुरू जी कहते हैं: हे भगवन! सुहागणि (कंती) कंत वाली इसत्री वही है, जो आपणे पती के, भव तेरे (अंकि) सरूप में समाई जावै अरथात अभेद होई जावै॥9॥

पुना आपणी दशा कहते हैं:

भादउ भरमि भुली भरि जोबनि पछुताणी ॥

जो (भादुइ) दूजा भाउ भइआ है बुधी तिस विखे लग कर भरम में भूल गई है। जब से जोबन भरा अरथात आसुरी संपता का संघटु भइआ तब से मैं पसचाताप करती हूं॥

आसुरी रूप जोबन सफुट करते हुए कहते हैं:

जल थल नीरि भरे बरस रुते रंगु माणी ॥

जैसे बाहर जल कर सर भरे होते हैं तैसे ही अंत्रीव जल के (थल) असथान इंद्र्य़ सबद सपरस रूप रस गंध आदि नीर से भरे हुए हैं। ऐसी रुत विखे मोह रूप बादल पदारथों रूपी बरखा करता है, भाव से मोह कर पदारथों की पकड़ होती है। अर तिस में अंतहिकरण (रंगु) अनंद भोगते हैं, भाव उपराम नहीं होते॥

बरसै निसि काली किउ सुखु बाली दादर मोर लवंते ॥

एक पदारथों की बरखा होती है, दुतिय अवस्था वा अविद्या रूप रात्री काली है, त्रितीए अनकूल प्रतिकूल कथन ते राग दुवैख रूप दाद्र (लवने) बोलते हैं। संकलप विकलप रूप सूर भोग रूप सरपों के खाणेहारे फुंकारे मारते हैं अरथात उदत हो रहे हैं। इतने बिघनों के होते मुझ (बाली) इसत्री हो के पती आप से बिनां सुख कैसे होवै? जो अचाह भी नहीं अर चित कौ पीआ से बिना अराम नहीं है॥ तिस पर कहते हैं:

प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले भुइअंगम फिरहि डसंते ॥

तिन का चित रूपी चात्रिक दरसन रूप सुआंति बूंद की इछा कर के पती पती कहि कर पुकारता है। पुना भादों में सरप बडे होते हैं, ईहं दुवैत रूप भाद्रों में कामादिक पंच बिकार रूप सरप डंग मारते फिरते हैं॥ पुना मछर का डंग होता है, सो कहते हैं:

मछर डंग साइर भर सुभर बिनु हरि किउ सुखु पाईऐ ॥

मतसर रूप मछर का डंग है, संसार (साइर) समुंदर जनम मरन रूप जल कर के (सुभर) लबालब हो रहा है। ऐसे संसार समुंदर में हे हरी! आप से बिनां दैसे सुख प्रापत होवै, भाव यहि कि आप मलाह हो कर मेरे को पार कीजीए॥

नानक पूछि चलउ गुर अपुने जह प्रभु तह ही जाईऐ ॥१०॥

स्री गुरू जी कहते हैं: हे हरी! तेरी प्रापती का साधन गुर उपदेस है। सो अपने गुरों से पूछ कर तिस में (चलउ) परविरत होवउ। हे प्रभू! जहां तेरे गुरू दसे तहां ही जाईए अरथात जो साधन कहे सो करने से तेरी प्रापती होती है॥10॥

अब अस्सू के अलंकार से कहते हैं:

असुनि आउ पिरा सा धन झूरि मुई ॥

जो आसा लग रही है यही असू है। तिस में हे (पिरा) पती! मेरे पास आईए, किउंकि मैं (साधन) इसत्री तेरी विछोड़े से झूर कर मरती हूं ता ते सीघर दरसन दीजीए॥

ता मिलीऐ प्रभ मेले दूजै भाइ खुई ॥

ए प्रभू! मेरी बुधी (दूजै) दुवैत भाउ में (खुई) भुली हूई है, जो आपणे साथ मेलो तो मिलणां होता है अर तूं निरदोस हैं॥ सो कहते हैं:

झूठि विगुती ता पिर मुती कुकह काह सि फुले ॥

मैं झूठ ने (विगुती) खराब करी हां (पिर) पती मैं तउ तैने (मुती) तिआगी पुना जैसे असू के महीने पिलछी अर काही फूलती है, तैसे ही सीस अर दाड़ी के कीस सियामता के तिआग से काही वत चिटे हुए हैं, भाव से ब्रिध अवसथा आई है॥ जे कहैं अब तो कोई साधन कर? तिस पर कहते हैं:

आगै घाम पिछै रुति जाडा देखि चलत मनु डोले ॥

पहिले (घाम) धूप तेजु सी अरथात जुवा अवसथा थी सो बीत गई है, तिस के पीछे (जाड़ा) जड़हता अरथात ब्रिध अवसथा आई है। अब बरतमान में ऐसा चलित्र देख कर के मेरा मन डोल रहा है, किउंकि ब्रिध अवसथा में साधन कोई नहीं हो सकता, तां ते एक आसा है॥ सो कहते हैं:

दह दिसि साख हरी हरीआवल सहजि पकै सो मीठा ॥

बाह्य अरथ तो प्रसिध है: यथा जो अंन सने सने पके पके सो मीठा होता है अर जो अप्रपक कटीए सो तैसा नहीं होता। अंत्रीव कहते हैं: दसो दिसा में हे हरी! तेरीआं साखां जो साम, रिग आदिक बेद है, तिन की हरिआवली हो रही है। तिन बेदों दुआरे जो सने सने प्रपक होवै, भाव अडोल निसचे कर जो अनंदु प्रापत होता है, सो मिठा है, किआ अनंदवांन होता है। जा दसो दिसा में हे हरी! तेरी साखा रूप सारे हरिआवल हो रहे है अरथात अवतार धार कर जो भगत तारे हैं, ऐसा गुनानवाद करता हूआ (सहित) सांती कर (पकै) प्रापत होवै सो मीठा है अरथात आतम अनंद कर जुगत होता है; वा सतसंग रूप साखों की हरिआवली दसो दिसां में (हरी) अती सबज हो रही है, तिस सतिसंग में जो (सहिज) ग्यान कर (पके) परपक होवै सो (मीठा), भाव मीठा रस अरथात आतम अनंदी भोगता है। तां ते अपर साधनों ते बिनां जैसे वकील दुआरा राजा की प्रापती सीघर होती है, तैसे ही गुरों ही रूप वकील दुआरा सिख को परमेसुर की प्रापती दिखावते हुए कहते हैं:

नानक असुनि मिलहु पिआरे सतिगुर भए बसीठा ॥११॥

स्री गुरू जी कहते हैं: तेरी आसा रूप असू का महीनां है, हे पिआरे! इस में मुझ को मिलीए अब आप के अर मेरे में सतिगुरू (बसीठा) बकील हूए हैं॥11॥

कतकि किरतु पइआ जो प्रभ भाइआ ॥

लोक कतक में तलावों पर दीपक बालते हैं, इस दीपक का क्रित उस (कतकि) जीव को पड़ा है, जो हे प्रभू! तेरे को भाइआ है॥

दीपकु सहजि बलै तति जलाइआ ॥

जो प्रभू को भाइआ है तिस के रिदे में (सहजि) ग्यान रूप दीपक बलता है और (तति) सार ग्रहण रूप तेल कर जलाया है॥ यथा प्रमाण – 'तत तेलु नामे कीआ बाती दीपकु देह उजिआरा॥'

दीपक रस तेलो धन पिर मेलो धन ओमाहै सरसी ॥

दीपक ग्यान रस सबद तत्व का परयाय है वा तत सो प्रेम तेल जलाया है, तिस के परकास कर धन पिर का मेल भइआ है। मेल के (ओमाहै) उतसाह कर धन सरसी भई वा मन कर उमाह अर तन कर सरसी भई॥

अवगण मारी मरै न सीझै गुणि मारी ता मरसी ॥

जो इसत्री कामादि अवगुणों ने मारी है वहु जीव से नहीं मरती, तिसी ते सीझती नहीं। जब सुभ गुणों ने मारी अरथात संसाराकार ब्रिती हटी तौ जीव भाव से मरेगी तौ सीझेगी॥

नामु भगति दे निज घरि बैठे अजहु तिनाड़ी आसा ॥

जिन को नाम जाप रूप भगती आप ने दीनी है तिनों का स्वै सूरप में निवास हूआ है। मेरे को अब तक भी तिन की आसा लगी हूई है॥

नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खटु मासा ॥१२॥

स्री गुरू जी कहते हैं: हे प्रभू! तेरे विखे कपट रूपी दर लग रहा है, सो खोलहु अरथात मेरे रिदे से दूर कर के मिलीए। तां ते तेरे वियोग के दुख कर के एक घड़ी छे महीने की परतीत होती है। वा आगे से परमेसर कहता है: हे भाई! तौ तुम मिलोगे जब (दर) अंदरों कपट रूप कपाट खोलोगे। एक घड़ी को खोलो वा छे महीने को खोलो तबी मिलोगे॥12॥

मंघर माहु भला हरि गुण अंकि समावए ॥

हे हरी! जिन के (अंकि) रिदे में तेरे गुण समाए हैं तिन को मंघर का महीन भला है; वा (मं) मेरा (घर) जो सरीर है (साहु) अतिसै कर भला है, भाव यहि कि मनुख सरीर सरब जोनीओं से उतम है। परमान यथा: “अवरु जोनि तेरी पनिहारी” किउंकि हे हरी! तेरे गुण मेरे (अंकि) रिदे में समाए हैं, इसी ते भला उतम है॥

गुणवंती गुण रवै मै पिरु निहचलु भावए ॥

जो गुणों वालीआं इसत्रीआं हैं, सो तेरे गुणहु कर तुझ को रावतीआं हैं और मेरे को भी, हे (निहचलु) अचल पती! तूं भावता हैं॥

निहचलु चतुरु सुजाणु बिधाता चंचलु जगतु सबाइआ ॥

तूं (निहचलु) अबिनासी हैं, बिवहारों के सिध करने को चतुर है, घट घट के अंतर की जानणे को सुजान पुना (बिधाता) फल परदाता हैं और सभी जगत बिजुली सम चंचल है, भाव से नासवंत है॥

गिआनु धिआनु गुण अंकि समाणे प्रभ भाणे ता भाइआ ॥

जिन संत जनों ने रिदिओं में अग्यान धिआन आदी गुण समाए हैं, सो प्रभू तेरे को भाए हैं अर (ता) तिस ते तिन को तूं भाइआ हैं; वा जब आदि गुण हमारे रिदे में समाए हैं, तब हे प्रभू! हम तेरे को भाए और तूं हम को (भाइआ) पिआरा लगा हैं॥

गीत नाद कवित कवे सुणि राम नामि दुखु भागै ॥

(गीत) राग (नाद) वाजे अर कवीयों के कबित भी सुणे, तिनहु कर दुख ना हूए अर राम नाम जाप कर दुख भागे हैं; वा गीत गावणहारे नाद पूरनेहारे कविता करनेहारे इन सभ के दुख तेरे राम नाम सुणने कर भागे, भाव दूर हुए हैं॥

नानक सा धन नाह पिआरी अभ भगती पिर आगै ॥१३॥

स्री गुरू जी कहते हैं: हे (नाह) सुआमी सोई जीव रूप इसत्री तेरे को पिआरी है जिस ने (अभ) रिदे करके, हे पती! तेरे (आगै) सनमुख होइ कर भगती करी है॥13॥

अब ब्रिध अवसथा की बहुलता कहते हैं:

पोखि तुखारु पड़ै वणु त्रिणु रसु सोखै ॥

(पोखि) ब्रिधापनु होणे ते जड़ता रूप (तुखारु) बरफ पड़ती है, भाव बुधी सिथल हो जाती है (वणु) सरीर, यथा – 'फरीदा रुत फिरी बण कंबिआ' (त्रिणु) इंद्रै, इनहु में जो सकती रूप रस है तिस को सोखता है, भाव से इंद्रै आसकत हो गए हैं। परमाण यथा – 'फरीदा अखी देखि पतीणीआ सुणि सुणि रीणे कंन' (रीणे) सकते से खाली हूए॥

आवत की नाही मनि तनि वसहि मुखे ॥

हे प्रभू! ऐसी अवसथा विखे मेरे पास आवते किउं नहीं हो दूर भी नहीं हो और मुख उपलखत बाणी में निवास कर रहा हैं, भाव सता दे रहा हैं॥

मनि तनि रवि रहिआ जगजीवनु गुर सबदी रंगु माणी ॥

हे जगत के जीवन रूप! तूं मन तन विखे बिआपक हो रहा हैं। गुनों के सबद कर तेरे अनंद को (माणी) भोगीता है॥

अंडज जेरज सेतज उतभुज घटि घटि जोति समाणी ॥

अंडज, जेरज, स्वेतज, उतभुज इन चारों खाणी के जीवों के घटि घटि में तेरी चैतंन सता समाइ रही है॥

दरसनु देहु दइआपति दाते गति पावउ मति देहो ॥

हे दया पत दाते! मेरे को गुरां का दरसनु देहु। तिनां दुआरे आतम वसैणी मति दीजीए, जिस ते तेरे सरूप में (गति) प्रापति वा इसथती पावों॥

नानक रंगि रवै रसि रसीआ हरि सिउ प्रीति सनेहो ॥१४॥

स्री गेरु जी कहते हैं: हे रस रसी! हे वाहिगुरू! मेरे पुर यिह क्रिपा कीजीए कि मेरे मनु ग्यान को पाइकर भी तेरे (रंगि) प्रेम में रावण करे अरु तनु कर के भी प्रीती करे, पुनः बाणी का सनेहु भी तेरे साथ होवै॥14॥

माघि पुनीत भई तीरथु अंतरि जानिआ ॥

यथा – माघ मास में जन गन प्रयाग में मजन कर के पवित्र होते हैं तथा प्रारथना अनुसार सतसंग प्रापती द्वारा पवितरता कहिते हैं। हे भगवन! माघ सतो गुण तिस में सतसंग साथ मेल के मेरी बुधी पवितर भई है, किउंकि (तीरथु) पवित्र रूप तेरे को रिदे बीच मैने जाना है, वा इसी ते संतों को मैने रिदे के अंतर प्रयाग तीरथ रूप जाना है। अब वसेसता कहते हैं: प्रयाग तो बडे कसट कर प्रापति होता है।

साजन सहजि मिले गुण गहि अंकि समानिआ ॥

संत सजन सहजे ही मिले हैं, किउंकि सभ देसों में सदा सुलभ है इसी ते वसेस हैं। जे कहै तिस प्रयाग में तो पुंन प्रापति होते हैं? तिस पर कहते हैं: हे भगवन! तेरे गुणों को ग्रहण कर के मैं तेरे अंक सरूप विखै (समानिआ) समाइआ, भाव अभेद हुआ हूं यह पुंन है॥

प्रीतम गुण अंके सुणि प्रभ बंके तुधु भावा सरि नावा ॥

हे मेरे (बंके) सुंद्र प्रीतम प्रभू! सरवण करीए, नैं तेरे गुण रिदे में धारन कीए हैं। तां ते यिह क्रिपा कर इसी साध समागम रूप प्रयाग में इसनान करो, जिस कर तैनूं हछा लगां॥

गंग जमुन तह बेणी संगम सात समुंद समावा ॥

(गंग) भगती, (जमुन) करम कथा, ब्रहम बिचार, स्रस्वती, यही त्रिबेणी का संगम है। चतुसटे साधन स्रवन, मनन, निध्यासन यह सात समुंद बिसेश कर के संतों में (समावा) निवास करते हैं। चतुसटे साधन का रूप कहते हैं: प्रथम वैराग। सो वैरागु तीन प्रकार का है: मंद 1, तीवर 2, तीवर तर 3। मंद का रूप किसी इसत्री, पुत्र, धन आदिकों के विजोग कर ग्रहसत का त्याग कर विरकत हो जाणा। जो वही पदारथ मिल जावें तहां गिर पड़ा। आगे तीबर का स्वरूप: इस लोक ले भोगों का तिआग कर स्वरग आदी सुखों की मन में इछा बनी रहिणी। तीबर तर का स्वरूप यिह है: ब्रहम लोक प्रयंत सुख काग बिसटा के तुल जानणे। बिबेक का सरूप यिह हैं: जगत को मिथ्या अर परमेसर को सत जानणा। खट स्मपती का सरूप यिह है: 1 सम मन विस्यों से रोकणा, 2 दम इंद्रै विसयों से रोकणे, 3 सरधा गुरू सासत्र का कहणा सत जानणा, 4 समाधान सासत्र स्रवण करतिआं वा गुरों के वाक सुणतिआं मन को इकागर रखणा, 5 उपरती साधनहु के सहित सभ करमहु का त्यागु करना और बिख रूप जान के सभ विस्यों का त्याग कर्ना। इसत्रीओं को देख कर चित में गिलानी होवै यिह उधारमता है, 6 ततिख्या परमेस्वर प्रापती हेत धूप अर सीत भूख प्यास सहारनी। इन छेवों का एक साधन हैं: आगे मोख इछा यिह है ब्रहम की परापती ओ बंधकी हानी मोख का सरूप हैं। तिस मोख की चाहि रहिनी इस का नाम ममोख्यता है। यिह चार साधन कहे हैं: आगे सरवण 1, मनन 2। निध्यासन के स्रवण शट प्रकर क है: उप करम उपसंहार 1, अभ्यास 2, तीसराफलु 3, अपूरबता 4, पंजवै अर्थ वाद 5, उपपति 6। यिह स्रवण के छै लिंग चिनो के नाम हैं। आदि में जो अरथु ग्रंथ है धरणा तिसी को बहुत प्रितीपादन करना, तिसी अरथ महि समापति करणां। इस का नाम उपक्रम उप संहार है 1। इस पुर स्री मुखिवाक उदाहरण: ‘आदि सचु जुगादि सचु॥ है भी सचु नानक हिसी भी सचु॥’ जो वसतु कहिणो योग है तिस को बार्मबार कहे, तिस का नामु अभ्यास है जैसे गुरू जी ने कहा है: ‘साचा साहिबु साच नाइ’ इतआदी, सो अभ्यासु है। जो प्रितीपाद अदुती वसतु है, उस को अवर प्रमाणो कर कहणा एकु सच्च है दूजा ऐसा नहीं है गुरू वाक:

‘कथना कथनी न आवै तोटि॥ कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि॥’

‘कहणा कथनु न जाई॥ वारिआ न जावा एक वार॥’

यिह तीसरा स्रवण अपूरबता है। प्रत्तख्य आदि प्रमाणो का विस्य नहीं है। प्रितिपादन करने योग जो आतम ग्यान है इस को प्रयोजन भी कहते हैं अर फल भी कहते हैं। इस पर गुरूवाक प्रमाण है:

'गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं॥'
'गुरा इक देहि ब्खाई॥'

सासत्रों में गुरों द्वारे ग्यान की प्रापती कही है तां ते नितसति गुरों की सेवा करनी योग है। जहां ऐसे कथन होवै सो अरथबाद है। अरथाबाद नाम उसतती का है। बरनन जोग जो पदारथ तिस में तिस की उसतती होवै। स्री गुरू वक प्रमाण:

'नानक निरगुण गुणु करे गुणवंतिआ गुण देइ॥
तेहा कोई न सुझदी जि तिसु गुण कोई करे॥'
'ब्रहमगिआनी आपि परमेसर॥'

इतआदि जहां कथन होवै सो अरथ वादु है। अब खसटम उपपती कहते हैं: जो प्रकरण कर प्रितपादन कीया अरथु है तिस अरथ के सिध करने को तिसी परकरण जो जुगती स्रवण करी है, उस का नामु उपपती है। उपपती नाम जुगती का है। जुगति नाम द्रिस्टांत का है॥ प्रमाण गुरू वाक" 'साअलाही सालाहि एती सुर्ति न पाईआ॥ नदीआ अतै वह पवहि समुंद न जाणीअहि॥'

नदी रूप ईसर, वाह नाम नाले का है। नाला रूपु जीव ब्रहम समुंद्र में परापति हो कर नदी वाह दोनो नाम मिट जाते हैं, भाव यहि कि ब्रहम से प्रापति हुए ते ईस जीव नाम कोउ नही रहिता। एक चिद घन देव ही है। कोट जतन कीए से भी ब्रहम समुंद्र से जुदे नहीं होते। ऐसी जुगतीओं का नाम उपपती रूप खस्टमो स्रवन है। बेद रूप छांदोग उपनिशाद दे खशटमो धिआइ में लिखा है कि सिख इस रीति से आतम स्रवण करे। सरवण खट प्रकार समापतं॥

आगे मनन चला: विजाती प्रतेका त्रिसकार सजाती प्रते प्रवाह का नामु मनन है। जीव ब्रहम के भेद की बाधक औ अभेद की साधक युकतिओं से अदुती ब्रहम का चिंतन मन कहीता है। अनातमाकार ब्रिती के बिबधान रहित ब्रहमाकारब्रिती की इसथिती निधयासन कहीए। प्रमाण गति संसे स्रवण से दूर होवै है औ प्रमे युगति संसे मनन दूर होवै। बिप्रीत भावना निधयासन से दूर होवै है। ब्रिती की प्रपकता का नामु निधयादन है। इसी निधयासन के अंतर भूत समाधी है। ब्रिती की अती गाड़ता का नामु समाधी है। सो 2 प्रकार की है: सावकलप, निरविकलप। भेद ते सो आगे खट प्रकार कि है। तीन अंतर तीन बाहर, छै में से दो निरविकलप, चार साविकलप। बिसतार के भ्य से ईहां इन का स्वरूप नहीं कहा। एह सात समुंद जो सात साधन कहे गए हैं, सो संत समागम प्रयाग में हमेश निवास करते हैं॥

पुंन दान पूजा परमेसुर जुगि जुगि एको जाता ॥

माघ मास मकर रास तिस में जब सूरज आवता है तब प्रयाग में इसनान कर के पुन दान पूजा करते है। ईहां सांझक गुण माघ तिस में सरधा रूप मकर रास में ग्यान भान का हमेश पुरब रहित है। अब परसंग कहते हैं: ऐसे सजण रूप तीरथ् में हम ने पुन दान पूजा आदिक सुभ करम कौन करे हैं, जो जुगों जुगों में परमेस्वर एक जाता है। संतहु द्वारा निसचे पूरबक सो कहिते हैं: पुन समें सिर दान हमेश देन का नाम है॥

नानक माघि महा रसु हरि जपि अठसठि तीरथ नाता ॥१५॥

तीरथों में जो जपु करीता है। ईहां संत प्रयाग में सतो गुण माघ विखे, हे हरी! तूं जो महा रसु रूप हैं 'आतम रस जिह जानिआ' इस कथन ते निसचे कर के सो आतमा रस रूप को प्रापति हो कर इह जीउ परम अनंद रूप हो जाता है। इस कथन ते हे हरी! एक रस तेरे को रस रूप जान कर पान कीआ है, भाव धारन कीआ है। अर अठ सठ तीरथ इसनान का फल प्रापति हूआ है, भाव इह सतिसंग तीरथ में अठाहठ तीरथों के इसनान का फल होता है॥15॥

अब सतसंग द्वारा भगवंत प्रापती कहते हैं:

फलगुनि मनि रहसी प्रेमु सुभाइआ ॥

जब (फलगुनि) दैवी संपती गुणो का फल्ह हूआ, तब (मनि) मनन कर के (रहसी) अनंद भई हूं, किउंकि हे परमेस्वर! तेरा सुंद्र प्रेम मेरे को भाइआ है॥ जे कहै वहु अनंद विखे अनंद सम खिन भंगर होवेगा? तिस पर कहते हैं:

अनदिनु रहसु भइआ आपु गवाइआ ॥

मेरे को अनदिन एक सवा रात्र दिन अनंद प्रापति हुआ है, किउंकि अनंदक प्रतिबंधकु जो आपा भाउ था, सो गवाइ दीआ है जे कहै आपा भाउ कैसे दूर हूआ? तिस पर कहते हैं:

मन मोहु चुकाइआ जा तिसु भाइआ करि किरपा घरि आओ ॥

हे प्रभू! (जा) जो (तिसु) को मेरा प्रेमु भाया तौ आपा भाव का कारन जो मेरे मन विखै (मोहु) अग्यान था, सो आप ने चुकाइ दीआ है। अब क्रिपा द्रिसटी कर के मेरे (घरि) रिदे में आइ कर निवास कीजीए, भाव साख्यात होईए॥ जे कहै मेरी प्रापती का कोई साधन करु? तिस पर कहते हैं:

बहुते वेस करी पिर बाझहु महली लहा न थाओ ॥

हे (पिर) पती! तेरी क्रिपा से बिनां जेकर मैं हंता कर के साधन रूप अनेक प्रकार के वेस करों तां वी तेरे (महली) स्वरूप विखै, वा मैं जग्यासू इसत्री थाउं को नहीं पावती हूं। तां ते इह निसचै कीआ है कि तेरी क्रिपा ही सुख रूप है। इस प्रकार प्रिथमैं सतसंग बहुड़ो प्रेमु सुभाइआ है, पुनः आपा भाव सहित मोह चुकाइआ तब प्रापती भई सो कहते हैं॥

हार डोर रस पाट पट्मबर पिरि लोड़ी सीगारी ॥

हरि हरि जाप हार, ब्रिती डोर, सुभ करम रसु, (पाट) प्रेम रूपी समान बसत्र, ग्यान रूप पटंबर। हे (पिरि) पती! जिस पूरबोकति सिंगार को मैं (लोड़ी) काहती थी; वा हे पती! जब तैने चही तब तिस कर के आपने में (सीगारी) भूख्यत करी हूं॥

नानक मेलि लई गुरि अपणै घरि वरु पाइआ नारी ॥१६॥

स्री गुरू जी कहते हैं: मैं नारी जब अपने गुरों ने आपणे नाल मेल लई तब मैं नारी ने, (वरु) पती! तेरे को अपने घर में ही पाइ लीआ। तां ते हे पती! वाहिगुरू ही तेरे प्रापति करने का कारनु है॥16॥

अब वाहिगुरू की प्रापती का फलु प्रगट करते हैं:

बे दस माह रुती थिती वार भले ॥

(बे) दो अर दस, बारां महीने तिन महि शट रुते और तिनों में पंद्रह तिथ, तिन महि सात वार भले हैं॥

घड़ी मूरत पल साचे आए सहजि मिले ॥

पुनः एक वार में चौसठ घड़ीआं, तिन में (मूरति) दो घड़ीआं, तां में साठ फल होवहि तौ एक घड़ी बनती है। तीस चसे का पल होता है। पंद्रह विसिओं

का एक चसा होता है। पंद्रह निमेखों का एक विसा होता है। निमख नेत्रहु के मीलन उन मीलन का नाम है। सिधांत इहु है कि निमख से लैकर बरस प्रयंत सभ (सचे) सफल हैं, किउंकि (सहजि) अचुत स्वरूपु जो आइ॥

प्रभ मिले पिआरे कारज सारे करता सभ बिधि जाणै ॥

जब प्रभू प्यारे मिले तब सभी कारज हमारे (सारे) सवार दीए हैं। इस में असचरज नहीं है किउंकि (करता) वाहिगुरू सभ बिधीआं जानता है तिस ते सभ बिधां भई हैं॥

जिनि सीगारी तिसहि पिआरी मेलु भइआ रंगु माणै ॥

जिस वाहिगुरू ने मैं सीगारी हूं तिस को पिआरी लगी हूं। अब तिस के साथ मेल हुआ है इसी ते (रंगु) अनंद को भोगती हूं॥ अब पर्मपरा कारण कहते हैं:

घरि सेज सुहावी जा पिरि रावी गुरमुखि मसतकि भागो ॥

जौ मैं पती को भाई तौ सरीर घर में अंतहकरण रूप सेज सोभनीक होती भई है। किउंकि गुरों द्वारे हमारे मसतक का भाग जागा है तौ पती मिला है॥

नानक अहिनिसि रावै प्रीतमु हरि वरु थिरु सोहागो ॥१७॥१॥

स्री गुरू जी कहते हैं: (अहिनिसि) निरंतर वा रात्री दिन तिस प्रीतम को रावते हैं, पुनः हरी वर का सुहाग थिर हूआ है। यथा – 'अकाल मूरति वरु पाइआ अबिनासी ना कदे मरै न जाइआ॥' तीन विसेसनो से त्रिकालाबाध है॥17॥1॥